के सं० १९९९ के माघ महीने में समारोह पूर्वक मन्दिर की प्रतिष्ठा करवायी। तदनन्तर राजनांदगांव के चातुर्मास में भी उपधान आदि करवाये। रायपुर होकर महासमुन्द में चातुर्मास किया। धमतरी पधारकर सं० २००१ के फाल्गुन में अञ्जनशालाका प्रतिष्ठा, गुरुमूर्त्ति प्रतिष्ठादि विशाल रूप में उत्सव करवाये। कान्तिसागरजी की प्रेरणा से महाकोशल जैन सम्मेलन बुलाया गया जिसमें अनेक विद्वान पधारे थे। फिर रायपुर चातुर्मास कर सम्मेतशिखर महातीर्थ की यात्रार्थ पधारे। कलकत्ता संघ की वीनती से दो चातुर्मास किये, बड़ा ठाठ रहा। फिर पटना और वाराणसी में चातुर्मास किये, फिर मिर्जापुर, रीयां होते हुए जबलपुर पधारे। वहां ध्वजदण्डारोपण, अनेक तपश्चर्यादि के उत्सव हुए। वहां से सिवनी होते हुए राजनांद गांव में सं० २००८ का चातुर्मास किया। आपके उपदेश से नवीन दादावाड़ी का निर्माण होकर प्रतिष्ठा सम्पन्न हुई। वहां से सिवनी हो भोपाल व लश्कर, ग्वालियर चातुर्मास किये। जयपुर पधारकर चातुर्मास किया। अजमेर दादासाहब के अष्टम शताब्दी उत्सव में भाग लेकर उदयपुर चातुर्मास किया। तदनन्तर गढसिवाणा चातुर्मास कर गोगोलाव जिनालय की प्रतिष्ठा कराई। गुजरात छोड़े बहुत वर्ष हो गये थे, अहमदावाद संघ के आग्रह से वहां चातुर्मास कर पालीताना पधारे सं० २०१६ में उपधान तप हुआ। गिरिराज पर विमलवसही में दादासाहब की प्रतिष्ठा के समय जिनदत्तसूरि सेवासंघ के अधिवेशन व साधु सम्मेलन आदि में सब से मिलना हुआ।

पालीताना-जैन भवन में चातुर्मास किये। आपकी प्रेरणा से जैनभवन की भूमि पर गुरुमन्दिर का निर्माण हुआ। दादा साहब व गुरुमूर्तियों की प्रतिष्ठा हुई। सं० २०२२ में घण्टाकर्ण महावीर की प्रतिष्ठा हुई। पालनपुर के गुरु भक्त केशरिया कम्पनी वालों के तरफ से ५१ किलो का महाघण्ट प्रतिष्ठित किया। दादासाहब के चित्र, पंचप्रतिक्रमण एवं अन्य प्रकाशन कार्य होते रहे। वृद्धावस्था के कारण गिरिराज की छाया में ही विराजमान रह कर सं० २०२४ के वैशाख सुदि ९ को आपका स्वर्गवास हो गया।

पुरातत्व एवं कलामर्मज्ञ प्रतिभामूर्ति मुनि श्रीकान्तिसागरजी को श्रद्धाँजलि

[लेखक—अगरचन्द नाहटा]

संसार में दो तरह के विशिष्ट व्यक्ति मिलते हैं। जिनमें से किसी में तो श्रमकी प्रधानता होती है किसी में प्रतिभा की। वैसे प्रतिभा के विकास के लिए श्रमकी भी आवश्यकता होती है और अध्ययन व साधना में परिश्रम करने से प्रतिभा चमक उठती है। फिर भी जन्म जात प्रतिभा कुछ विलक्षण ही होती है, जो बहुत परिश्रम करने पर भी प्रायः प्राप्त नहीं होती। अभी-अभी जयपुर में जिन साहित्यालंकार पुरातत्ववेत्ता और कलामर्मज्ञ मुनिश्री कान्तिसागर जीका असामयिक स्वर्गवास ताः २८ सितम्बर की शाम को हो गया है, वे ऐसे ही प्रतिभा सम्पन्न विद्वान मुनि थे। जिनका संक्षिप्त परिचय यहां दिया जा रहा है।

बीसवीं शताब्दी के जैनाचार्यों में खरतरगच्छ के आचार्य श्रीजिनकृपाचन्द्रसूरिजी बडे गीतार्थ विद्वान और क्रियापात्र आचार्य हो गये हैं। जो पहले बीकानेर के यति सम्प्रदाय में दीक्षित हुए थे। आगे चलकर अपने सारे परिग्रह को बीकानेर के खरतरगच्छ संघ को सुपुर्द करके

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

क्रियाउद्धार करते हुए साधु हो गये। आगमों आदि का विशेष अध्ययन करके आचार्य बने। उनके शिष्य उपाध्याय सुखसागरजी ने अनेकों ग्रन्थों को प्रकाशित कराया और अच्छे वक्ता थे। उनके लघुशिष्य स्वर्गीय कान्तिसागरजी हुए। जिनके बड़े गुरुभाई मंगलसागरजी अभी पालीताना में हैं।

जन्मतः वे सौराष्ट्र जामनगर के थे। छोटी अवस्था में ही जैनेतर कुल में जन्म लेने पर भी उ० सुखसागरजी के दीक्षित शिष्य बने। अपनी असाधारण प्रतिभा से थोड़े समय में ही उन्होंने अनेक विषयों में अच्छी गति प्राप्त कर ली। हिन्दी भाषा पर उनका बहुत अच्छा अधिकार हो गया। संस्कृतनिष्ठ प्राञ्जल भाषामें उनके लिखे हुए ग्रन्थ एवं लेख विद्वद्-मान्य हुए। 'खण्डहरों का वैभव' और 'खोज की पगडंडिया' ये दो महत्वपूर्ण ग्रन्थ तो भारतीय ज्ञानपीठ जैसी प्रसिद्ध संस्था से प्रकाशित हुए। उत्तरप्रदेश सरकार ने इनकी श्रेष्ठता पर पुरस्कार भी घोषित किया। विशालभारत, अनेकान्त, भारतीय, साहित्य, नागरी प्रचारणी पत्रिका आदि हिन्दी की कई प्रसिद्ध और विशिष्ट पत्रिकाओं में आपके महत्वपूर्ण लेख प्रकाशित होते रहे हैं। जिनसे हिन्दी साहित्य में आपका अच्छा स्थान बन गया। 'ज्ञानोदय' आदि कई पत्रों के तो आप सम्पादकमण्डल में भी रहे हैं।

वक्तृत्वकला भी आपकी उच्चकोटि की थी साधारणतया बहुत से व्यक्ति अच्छे लेखक तो होते हैं वे उत्कृष्ट वक्ता नहीं होते। या वक्ता होते हैं तो अच्छे लेखक नहीं होते। पर आप दोनों में समान गति रखते थे। अर्थात् अच्छ लेखक और प्रभावशाली वक्ता दोनों रूपों में आपने अच्छी प्रसिद्धि प्राप्त की थी।

पुरातत्त्व और कला के तो आप मर्मज्ञ विद्वान थे। जैनसाधुओं और आचार्यों में तो इन विषयों के आप सर्वोच्च विद्वान माने जा सकते हैं। प्राचीन मन्दिरों, मूर्तियों और कलावशेषों के खोज एवं अध्ययन में आपकी जबरदस्त रुचि थी। मध्यप्रदेश के अनेक गांव नगरों में घूमकर आपने उपरोक्त दोनों ग्रन्थ और बहुत से महत्वपूर्ण लेख लिखे थे। छोटी-छोटी बातों पर भी आप बहुत सूक्ष्मता से ध्यान देते थे और थोड़ी सी बात को अपनी प्रतिभा के बल पर बहुत विस्तार से और बड़े अच्छे रूप में प्रगट कर सकते थे। इतिहास, पुरातत्व और कला में तो आपकी गहरी पेठ थी। जबलपुर चौमासे के समय आपने काफी प्राचीन अवशेषों (मूर्तिखण्डों) को इधर उधर से बड़े प्रयत्न पूर्वक संग्रह किया था। जिसे मध्यप्रदेश सरकार ने अधिकार में ले लिया। राजस्थान में रहते हुए आपने उदयपुर महाराणा के इष्ट देव-एकलिंगजी पर एक बहुत महत्वपूर्ण ग्रन्थ तैयार किया था। आस-पास के नागदा आदि प्राचीन कलाधामों-जैन मन्दिरों व मूर्तियों पर आपने नया प्रकाश डाला। सैकड़ों कलापूर्ण प्राचीन अवशेषों के फोटों लिवाये। खेद है आप के घोर परिश्रम से तैयार किया हुआ एकलिंग जी वाला महत्वपूर्ण वृहद् ग्रंथ अभी तक प्रकाश में नहीं आ सका।

प्रतिभासम्पन्न व्यक्ति जिस किसी विषय को हाथ में लेता है उसी में अद्भत चमत्कार पैदा कर देता है। उदयपुर रहते हुए कई कारणों से आपको आर्युवेद का अध्ययन व प्रयोग करना आवश्यक हो गया, तब आपने बहुत से असाध्य रोगियों को रोग मुक्त कर दिया था। आयुर्वेदिक सम्बन्धी अनुभूत प्रयोगों का एक संग्रह "आयुर्वेदना अनुभूत प्रयोगो" भाग १ नामक ग्रन्थ आपने गुजराती में प्रकाशित किया है। वैसे और भी कई ग्रन्थ आप प्रकाशित करने वाले थे। पर आयुष्य कर्म ने साथ नहीं दिया। 'जैन धातु प्रतिमा लेख,' नगर वर्णनात्मक हिन्दी पद्य संग्रह आदि आपके और भी ग्रन्थ प्रकाशित हैं। संगीत के भी आप अच्छे ज्ञाता थे। बुलन्द आवाज और अच्छा कंठ होने से आप 'अजित शान्ति स्तोत्र' आदि को ताल लय बद्ध बड़े अच्छे रूप में गाते थे।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पुरातत्व और कला के प्रति आपकी बाल्यकाल से ही गहरी अनुरक्ति रही है। खोज की पगडण्डियां के प्रारम्भिक वक्तव्य में आप ने लिखा है कि "बचपन से ही मुझे निर्जन वन व एकांत खण्डहरों से विशेष स्नेह रहा है। अपनी जन्मभूमि जामनगर की बात लिख रहा हूं। वहां का खण्डित दुर्ग ही मेरा क्रीडास्थल रहा है। आज से २२ वर्ष पूर्व की बात है—सरोवर के किनारे पर टूटे हुए खण्डहरों की लम्बी पंक्ति थीं। जहां बारहमास प्रकृति स्वाभाविक शृंगार किये रहती है। कहना चाहिये वे खण्डहर संस्कृति, प्रकृति और कला के समन्वयात्मक केन्द्र थे। उनदिनों मैं गुजराती चौथी कक्षा में पढ़ता था। पढ़ने में भारी परेशानी का अनुभव होता था। शाला के समय अपने बस्ते लेकर हमलोग सरोवर तटवर्ती खण्डहरों में छिपा देते और वहीं खेला करते। खण्डहर बनाने वालों के प्रति उन दिनों भी हमारे बाल-हृदय में अपार श्रद्धा थी। जैन कुल में उत्पन्न न होते हुए भी अल्पवय में मैंने जैन मुनि-दीक्षा अंगीकार की। सौभाग्यवश चातुर्मास के लिये बंबई जाना पड़ा। वहां प्राचीन गुजराती भाषा और साहित्य के गम्भीर गवेषक श्रीयुक्त मोहनलाल भाई दलीचन्द देसाई एडवोकेट, भारतीय विद्या भवन के प्रधान संचालक-पुरातत्वाचार्यमुनि श्रीजिनविजय और प्रख्यात पुरातत्वज्ञ डा० हंसमुखलाल धीरजलाल सांकलिया आदि अध्यवसायी अन्वेषकों का सत्संग मिला। उनके दीर्घ अनुभव द्वारा शोधविषयक जो मार्ग दर्शन मिला उससे मेरी अभिरुचि और भी गहरी होती गयी। मेरे मानसिक विकाश पर और कलापरक दृष्टिदान में उपर्युक्त विद्वत् त्रिपुटी ने जो श्रम किया है, फलस्वरूप खण्डहरों का वैभव एवं प्रस्तुत पुस्तक है।"

उपरोक्त दोनों पुस्तकें सन् १९५३ में प्रकाशित हुई थी। 'खोज की पगडण्डियों की प्रस्तावना डा० हजारीप्रसाद द्विवेदी जैसे विद्वान ने लिखी थी। उन्होंने लिखा है "श्री मुनि कान्तिसागरजी प्राचीन विद्याओं के मर्मज्ञ अनुसन्धाता हैं। मुनिजी प्राचीन स्थानों को देखकर स्वयं आनन्द विह्वल होते हैं और अपने पाठकों को भी उस आनन्द का उपभोक्ता बना देते हैं। उनकी दृष्टि बहुत ही व्यापक एवं उदार है। जैन शास्त्रों के वे अच्छे ज्ञाता भी हैं। मुनिजी के कहने का ढंग भी बहुत रोचक है। बीच-बीच में उन्होंने व्यंग विनोद की भी हल्की छींटें रख दी है। इतिहास को सहज और रसमय बनाने का उनका प्रयत्न बहुत ही अभिनन्दनीय है।"

करीब डेढ़ साल पहले जयपुर संघ के अनुरोध से वे लम्बा विहार करके पालीताना से जयपुर चोमासा करने पहुँचे तो अस्वस्थ हो गये। उसी हालत में पर्यूषणा के व्याख्यान आदि का श्रम अधिक पड़ा। तब से उनका शरीर क्षीण होने लगा। जयपुर संघ ने उपचार में कोई कमी नहीं रखी पर स्वास्थ्य गिरता ही गया और ता० २८ सितम्बर की शाम को हृदयगति अवरुद्ध हो के स्वर्गवास हो गया। जैन संघ ने एक नामी लेखक और उद्भट पुरातत्वज्ञ विद्वान और प्रतिभाशाली मुनि को खो दिया जिसकी पूर्ति होनी कठिन है। मुनिजी के प्रति मैं अपनी हार्दिक श्रद्धांजलि अर्पित करता हूँ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org